



THE TIMES OF INDIA

Date: 19-08-26

So, How Much Does E20 Save?

Not much, considering higher ethanol prices for industry, farmland diversion for maize, increasing imports of pulses and edible oils, and the toll on our aquifers

Arindam Goswami, [The writer is a research analyst at Takshashila Institution]

Fill petrol anywhere in India, about 20% of what goes into the tank is ethanol – alcohol derived from sugarcane juice and maize. This, govt says, has been done to reduce petroleum imports. It sounds like a smart move, given that India imports close to 90% of the oil it burns.

But substituting petrol with ethanol won't make sense if the ethanol itself is imported. That's why, in 2019, govt moved biofuel imports – ethanol is a type of biofuel – from the "free list" to the restricted one. Ethanol could no longer be imported for blending with fuel.

Regardless, India remained a net ethanol importer through 2025, and almost all the imported ethanol was American. Where was it going? To the pharma and chemical industries that used to buy from Indian distillers until the fuel blending programme started paying those distillers better.

It would have been a fair tradeoff had our dependence on imported crude reduced. But fact is, India's dependence on imported petroleum didn't decline. PPAC data shows increased crude import dependence, even as blending roughly doubled. That does not contradict govt's claim of 1.97L cr saved and 316L tonnes of crude substituted since 2014-15, because marginal savings and a worsening ratio can sit together.

Why didn't ethanol blending reduce dependence on imported crude as much as expected? It comes down to physics. Because 100% ethanol yields about two-thirds the energy of petrol by volume, a 20% blend, or E20, displaces only 14% of the petrol burnt per km, not 20%. The petroleum ministry itself says E20 reduces mileage of calibrated cars by 1-2%, and that of older cars by 3-6%.

Besides, this "saving" has its costs, with the ministry clarifying last month that E20 is costlier to produce than plain petrol when crude is near \$70 a barrel. Ethanol becomes economical only when crude hits \$120-\$130 level.

Meanwhile, the ban proved counterproductive in other ways. While imported ethanol was meant for industries, its use actually dropped. How could pharma and chemical sectors continue growing when their combined ethanol use was falling? It looks like they started importing more of the finished chemicals, instead of making them here.

Domestic production of industrial ethanol had halved during 2022-2024, as distillers preferred selling to oil marketing companies that offered them assured offtake at high administered prices. Naturally, the share

of imported ethanol in industrial consumption climbed. At one point, India was importing over 50% of ethanol used by pharma and chemical industries.

There's a bigger cost to be paid for ethanol as more land is devoted to feedstock crops. For instance, between 2021-22 and 2024-25, with administered price and assured offtake at work, maize output grew 8.8% a year and area under it 6.7%. In 2024-25, some 126L tonnes of maize – 29% of the crop – went to distilleries. In Maharashtra and Karnataka, land was diverted from pulses, soybean, millets and cotton.

As a result, India imported 16mn tonnes of edible oil in 2024-25. Imports of pulses hit a record 7.3mn tonnes, and in 2024, the country turned net importer of maize for the first time. Guess what, we spent 30 times more forex on edible oil imports than our savings from the curbs on ethanol imports.

That's before factoring in one more major cost of ethanol. NITI Aayog and the petroleum ministry had recommended maize as ethanol feedstock because they thought it would use less water. However, per the food secretary, it takes 4,670L of water to make 1L of ethanol from maize, compared with 3,630L for sugarcane. The new maize-growing areas are also in states with hard-rock aquifers. Beyond that, distilleries use 3-5L of processed water per litre of ethanol. This is an invisible cost but it will increase as more farmland is diverted for maize cultivation under the influence of high procurement prices.

And price incentives remain strong because India has built more distilleries than it needs for both fuel and non-fuel demands. American ethanol shipments had dropped from 14.9mn gallons last Dec to almost nothing by April 2026. It's easy to see why: with petrol blending stuck at the 20% level, surplus domestic ethanol is spilling back into the industrial market and pushing imports out.

That probably explains why maize and ethanol stayed off the table in the Feb 2026 India-US joint statement, even though India is willing to buy dried distillers' grains – a byproduct of US ethanol industry – and red sorghum as animal feed. Since DDGS competes with domestic oilseed meal, it's bad news for an agri sector already losing land to maize.

Distillers are now asking for permission to export, to blend ethanol with diesel, and to use ethanol in cooking stoves. Standards for E22-E30 fuel have also been announced. Policy seems to be driven by distilleries, missing the point that ethanol blending's main objective was to reduce petroleum imports.

Considering ethanol's impact on land use, pulses, oilseeds and water, and the import costs of edible oil and pulses, govt should clarify how much crude has been substituted, in both energy and volume terms. It should provide a clear accounting of land and water use, including the extra acreage involved. It should also limit the use of first-generation feedstocks – maize, sugarcane – and shift incentives to second-generation methods – crop stubble, forestry waste, etc, as promised in the 2018 National Policy on Biofuels but not yet delivered.



दैनिक भास्कर

Date: 19-08-26

देश में उभर रही नई चेतना को समावेशी दृष्टि से देखें

संपादकीय

सामूहिक चेतना देशकाल-परिस्थितियों के अधीन होती है। जिस मुद्दे ने चार दशक पहले प्रतिक्रिया उत्पन्न की थी, सम्भव है अब ना करे। एक ही बात को गुजरात की जगह बंगाल में भिन्न प्रतिक्रिया मिले। शैक्षिक, आर्थिक, व्यक्तिगत, सामाजिक आकांक्षाओं के कारण आज युवा और किसान अपने हालात के लिए सिस्टम को दोषी मानने लगे हैं। उनकी नाराजगी को भारत-विरोधी ताकतों की साजिश कहकर पहले की तरह खारिज करना इस आक्रोश को बढ़ाएगा ही एक खबर के अनुसार पिछले कुछ समय से सरकार औसतन हर मिनट किसी न किसी पोस्ट को डिलीट करने का आदेश सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म को देती रही है। एक लोकतांत्रिक शासन में चुनी हुई सरकार को इतना डर क्यों? तर्कशास्त्र की सर्वमान्य अवधारणा है कि जिसका तर्क तत्कालीन सामाजिक मूल्यों और समझ के अनुरूप होगा, वही मान्यता प्राप्त करेगा। लिहाजा सोशल मीडिया पोस्ट्स, सरकार की नीतियों के खिलाफ आवाजें अगर गलत हैं तो सरकार और सत्ताधारी दल के पास भी सबसे बड़ा तंत्र है सत्य को सामने रखने का विचारधारा की काट भी वैचारिक स्तर पर की जा सकती है। अर्बन नक्सल या दिमागी नक्सल जैसी अभिव्यक्तियों में जब इनसे सतर्क रहने, इन्हें पहचानने और अलग-थलग करने का आज्ञान होता है तो इससे हर वर्ग के आहत होने का खतरा है। सरकार के पास विकास के आंकड़े हों तो किसी भी तर्कसम्मत समाज या तबके को सही राह पर लाने का उन्हें प्रस्तुत करने से अच्छा रास्ता भला और क्या होगा ?

Date: 19-08-26

एल्गोरिदम ही सूझबूझ की जगह ले बैठें तो मनुष्य पीछे छूट जाएगा

प्रो. मनोज कुमार झा, (राजद से राज्यसभा सांसद)



कुछ व्यक्तित्व इतिहास के किसी एक अध्याय के पात्र नहीं रहते, बल्कि प्रत्येक पीढ़ी के सामने एक नैतिक प्रश्न बनकर उपस्थित होते हैं। महात्मा गांधी और चंद्रशेखर ऐसे ही व्यक्तित्व हैं। उन्हें साथ-साथ स्मरण करना लोकतंत्र की दो ऐसी परंपराओं को पुनः पढ़ना है, जिन्होंने सत्ता से अधिक समाज पर भरोसा किया।

दोनों के जीवन में यात्राओं का विशेष महत्व था। गांधी ने भारत को पैदल, रेल और बैलगाड़ी से जाना; चंद्रशेखर ने सत्ता के गलियारों से बाहर निकलकर समाज की धड़कनों को समझने के लिए भारत-यात्रा की। वे जानते थे कि भारत की आत्मा गांवों की धूल, कस्बों की बेचैनी और साधारण नागरिक की आकांक्षाओं में बसती है। यात्रा उनके लिए

समाज का अध्ययन थी।

आज का भारत अभूतपूर्व तकनीकी परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। दूरियां सिमटी हैं, सूचना का विस्फोट हुआ है और एआई हमारे निर्णयों को प्रभावित कर रहा है। तकनीक ने हमारी गति बढ़ाई है, पर क्या उसने संवेदना भी गहरी की है? यही वह प्रश्न है, जहां गांधी और चंद्रशेखर भविष्य के मार्गदर्शक बनकर सामने आते हैं।

लोकतंत्र की सबसे बड़ी त्रासदी तब शुरू होती है जब उसे केवल चुनावों तक सीमित कर दिया जाता है। चुनाव लोकतंत्र का उत्सव अवश्य हैं, पर उसका सार नहीं। जब नागरिक केवल मतदाता और राजनीति केवल चुनाव-प्रबंधन बनकर रह जाए, तब लोकतंत्र की आत्मा क्षीण होने लगती है। महात्मा गांधी के लिए लोकतंत्र कभी मात्र बहुमत का शासन नहीं था। उसकी कसौटी अंतिम पंक्ति में खड़े व्यक्ति का सम्मान थी।

गांधी कहते थे कि कानून मनुष्य को दंडित कर सकता है, पर उसे नैतिक नहीं बना सकता। करुणा किसी अधिनियम से पैदा नहीं होती और सह-अस्तित्व किसी न्यायिक आदेश से स्थापित नहीं किया जा सकता। इसलिए लोकतंत्र अंततः मनुष्य के भीतर जन्म लेता है। यही कारण है कि सार्वजनिक जीवन में भाषा और व्यवहार का महत्व केवल राजनीतिक नहीं, बल्कि नैतिक भी है। गांधी अपने प्रखर विरोधियों के प्रति भी सम्मानजनक भाषा का प्रयोग करते थे। चंद्रशेखर संसद में तीखी आलोचना करते थे, लेकिन विरोध को कभी वैमनस्य में नहीं बदलने देते थे। मतभेद लोकतंत्र की शक्ति है पर विरोधी का अमानवीकरण उसकी पराजय।

भारत की सबसे बड़ी शक्ति उसकी विविधता है। अनेक भाषाएं, आस्थाएं, संस्कृतियां और जीवन-पद्धतियां मिलकर भारतीयता का निर्माण करती हैं। गांधी ने इसे भारत की आध्यात्मिक शक्ति माना, जबकि चंद्रशेखर ने सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय एकता को एक-दूसरे का पूरक समझा। आज जब पहचान की राजनीति कई बार संवाद की राजनीति पर भारी पड़ती दिखाई देती है, तब यह स्मरण आवश्यक है कि भारत की आत्मा एकरूपता नहीं, सह-अस्तित्व में बसती है।

एआई के इस युग में सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह नहीं कि मशीनें कितना सोच सकती हैं, बल्कि यह है कि क्या मनुष्य अब भी महसूस कर पा रहा है। गांधी मशीनों के विरोधी नहीं थे; वे मनुष्य के विस्थापन के विरोधी थे। चंद्रशेखर भी विकास के नहीं; ऐसे विकास के विरोधी थे, जिसमें मनुष्य पीछे छूट जाए। यदि एल्गोरिदम विवेक का स्थान लेने लगे और मशीनें हमारी स्मृति बन जाएं, तो लोकतंत्र तकनीकी रूप से आधुनिक होते हुए भी नैतिक रूप से दरिद्र हो सकता है। लोकतंत्र का भविष्य केवल संसद नहीं, विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, परिवारों और नागरिक जीवन की छोटी-छोटी प्रक्रियाओं में निर्मित होगा। नई पीढ़ी यदि विविधता का सम्मान, प्रश्न पूछने का साहस और भयमुक्त-विवेक विकसित करेगी, तभी लोकतंत्र जीवित रहेगा।



दैनिक जागरण

Date: 19-08-26

स्वदेशी रक्षा सामग्री

संपादकीय

रक्षा मंत्रालय ने देश में बनने वाले रक्षा उपकरणों की जो नई सूची जारी की, वह यह बता रही है कि रक्षा मामले में आत्मनिर्भर होने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ा जा रहा है। इस सूची के अनुसार चार सौ से अधिक और सैन्य सामग्री का निर्माण देश में ही किया जाएगा। यह ऐसी छठी सूची है। इस सूची में उन्नत हल्के हेलीकॉप्टर, हल्के लड़ाकू विमान भी शामिल हैं और उच्च विस्फोटक टैंक-रोधी गोला-बारूद भी। इसका अर्थ है कि भारत समय के साथ ऐसी रक्षा सामग्री का निर्माण करने में सफल है, जिसकी आवश्यकता देश को भी है और जिसके निर्यात की संभावनाएं भी हैं। पिछले पांच वर्षों में 15 हजार से अधिक रक्षा सामग्री का स्वदेशीकरण किया गया है। इससे लगभग 9,000 करोड़ रुपये के आयात प्रतिस्थापन का अनुमान है। यदि देश को वास्तव में आत्मनिर्भर बनना है तो अन्य अनेक क्षेत्रों के साथ रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी। इससे विदेशी मुद्रा की बचत के साथ ही उसमें वृद्धि भी होगी, क्योंकि धीरे-धीरे देश का रक्षा निर्यात भी बढ़ रहा है। पिछले 12 वर्षों में देश का रक्षा निर्यात कई गुना बढ़ा है और आज लगभग सौ देशों को भारतीय सैन्य उपकरणों की आपूर्ति की जा रही है। भारत को अपनी जरूरत की रक्षा सामग्री का स्वदेश में ही अधिकाधिक निर्माण इसलिए करना चाहिए, क्योंकि अभी आवश्यक रक्षा सामग्री हासिल करने में अच्छी-खासी विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ती है। भारत रक्षा सामग्री के मामले में विश्व के लिए बाजार बनकर नहीं रह सकता। इसलिए और भी नहीं, क्योंकि कई बार उन्नत रक्षा सामग्री पाने में कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इनमें संबंधित देशों की कठोर शर्तें भी होती हैं। यह ठीक है कि कई देश उन्नत रक्षा सामग्री के साथ तकनीक भी दे देते हैं, लेकिन वह उत्तम कोटि की नहीं

होती। भारत को अपनी जरूरत की रक्षा सामग्री खुद बनाने के साथ ही रक्षा विनिर्माण का वैश्विक केंद्र भी बनना होगा।

यह सराहनीय है कि मोदी सरकार रक्षा सामग्री के स्वदेश में उत्पादन को विशेष महत्व दे रही है। पिछले दिनों प्रधानमंत्री ने लाल किले की प्राचीर से शक्ति की जिस सप्तधारा का उल्लेख किया, उसमें एक रक्षा शक्ति भी है। देश में अधिकाधिक उन्नत रक्षा सामग्री का निर्माण इसलिए संभव हो पा रहा है, क्योंकि निजी कंपनियों का सहयोग लेना शुरू किया गया है। यदि यह काम और पहले किया गया होता तो आज स्थिति और बेहतर होती। जैसे रक्षा क्षेत्र की निजी कंपनियां विश्वस्तरीय सैन्य सामग्री का निर्माण करने में सक्षम हैं, वैसे ही अन्य क्षेत्र की कंपनियों को होना होगा। आत्मनिर्भरता का यही मूल मंत्र है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 19-08-26

रोजगार के अवसर

संपादकीय



भारत दुनिया की सबसे बड़ी प्रवासी आबादी का प्रतिनिधित्व करता है और यहां के करीब 1.85 करोड़ लोग विदेश में रहते हैं। इतना ही नहीं भारत विदेश से वापस धनप्रेषण यानी रैमिटेंस हासिल करने वाला सबसे बड़ा देश भी है। यह इस आवश्यकता को रेखांकित करता है कि वैश्विक श्रम की मांग को पूरा करने के लिए कौशल विकास और संस्थागत तंत्र को मजबूत किया जाए। वर्तमान पाइपलाइन मुख्यतः कम कौशल वाले कार्यों पर केंद्रित है जहां केवल निर्माण क्षेत्र ही राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडीसी) द्वारा सुगम की गई विदेशी नियुक्तियों

का 71.3 फीसदी हिस्सा रखता है।

इस रुझान में विविधता लाने का बहुत बड़ा अवसर है। विकसित देशों में बढ़ती उम्र की आबादी और श्रम योग्य आयु वाले लोगों की बढ़ती संख्या के कारण श्रम बाजारों में हालात तंग हो रहे हैं। इसके साथ ही ढांचागत कौशल की विसंगति और शिक्षा तथा प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का कमजोर संयोजन भी कुशल श्रमिकों की कमी की वजह बन रहा है। मांग अब बुनियादी ढांचे और निर्माण, लॉजिस्टिक्स और परिवहन, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी और

डिजिटल सेवाओं, हरित परिवर्तन उद्योग, आतिथ्य, स्वास्थ्य सेवा तथा व्यक्तिगत और सामाजिक सेवाओं में विस्तारित हो रही है। भारत की चुनौती यह है कि वह अपने श्रमबल को इन कमी या जरूरत वाले क्षेत्रों से जोड़े बजाय इसके कि वह पारंपरिक, कम वेतन वाले प्रवासन चैनलों पर मुख्य रूप से निर्भर रहे।

खराब तरीके से संगठित प्रवासन भारत की आर्थिक उपलब्धियों को भी कमजोर कर सकता है। नैशनल ब्यूरो ऑफ इकनॉमिक रिसर्च द्वारा 2023 में प्रकाशित एक अध्ययन में भारतीय श्रमिकों के यूएई प्रवासन का विश्लेषण किया गया और पाया गया कि प्रवासन ने पारिश्रमिक को दोगुना कर दिया लेकिन बिचौलियों की फीस ने वास्तविक आय को लगभग 10 फीसदी तक घटा दिया। प्रवासियों ने अपनी निजी खुशहाली और संतुष्टि में भी काफी गिरावट महसूस की। इस तरह के खर्च, अधूरी जानकारी और सुरक्षा के कमजोर इंतजामों से पैदा होने वाले जोखिमों को उजागर करते हैं।

नीति का उद्देश्य केवल अधिक कामगारों को भेजना नहीं होना चाहिए बल्कि अनौपचारिक कम वेतन वाले प्रवासन से हटकर मांग-आधारित कौशलयुक्त गतिशीलता की ओर बढ़ना चाहिए। इसके लिए माइग्रेशन डैशबोर्ड, विदेशी भाषाओं का प्रशिक्षण, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त प्रमाणन और नियोक्ता साझेदारियों की जरूरत है। बड़ी संख्या में राज्यों को मोबिलिटी रिसोर्स सेंटर्स स्थापित करने पर विचार करना चाहिए जो गतिशीलता सेवाओं की अंतिम डिलीवरी के लिए संस्थागत इंटरफेस के तौर पर काम करें।

ये केंद्र परामर्श, करियर मार्गदर्शन, गंतव्य देश की जरूरतों की जानकारी, दस्तावेजीकरण और प्रस्थान पूर्व सहयोग प्रदान कर सकते हैं जिससे कामगार अधिक जानकारीपरक निर्णय ले सकें और अनौपचारिक बिचौलियों पर उनकी निर्भरता कम हो। इसके अलावा प्रवासी समुदाय का समर्पित प्रतिनिधित्व भी महत्वपूर्ण है ताकि कामगारों की चिंताओं को मेजबान देशों की सरकारों तक पहुंचाया जा सके, कानूनी सुरक्षा को मजबूत किया जा सके और समय पर शिकायत निवारण सुनिश्चित किया जा सके।

राज्य को सर्कुलर माइग्रेशन (श्रमिकों की बार-बार आवाजाही) को भी बढ़ावा देना चाहिए। कौशल, बचत और अंतरराष्ट्रीय अनुभव के साथ लौटने वाले कामगारों को घरेलू बाजार में दोबारा प्रवेश करने, उद्यम शुरू करने या उत्पादक रोजगार पाने के लिए सहयोग मिलना चाहिए। इससे प्रवासन केवल श्रम का एकतरफा प्रवाह न रहकर ज्ञान और पूंजी हस्तांतरण का माध्यम बन जाएगा।

यद्यपि यह ध्यान रखना आवश्यक है कि विदेशी प्रवासन घरेलू रोजगार तैयार करने का विकल्प नहीं हो सकता। भारत को दोहरी रणनीति अपनानी होगी। एक ओर उसे ऐसा कार्यबल तैयार करना जो बेहतर वैश्विक अवसरों तक पहुंच सके और दूसरी ओर घरेलू स्तर पर उत्पादक रोजगार का विस्तार करना होगा। उद्देश्य यह होना चाहिए कि प्रवासन आवश्यकता नहीं बल्कि अवसर पर आधारित विकल्प बने और भारत केवल श्रम आपूर्ति करने वाला देश न रहकर वैश्विक स्तर पर कौशलयुक्त मानव पूंजी का स्रोत बने।

पुलिस की भूमिका

संपादकीय

जंतर मंतर पर कॉकरोच जनता पार्टी (सीजेपी) के आंदोलन और 20 जुलाई को छात्रों के संसद-मार्च के दौरान दिल्ली पुलिस की कार्रवाई ने उस विरोध-प्रदर्शन को न सिर्फ देशव्यापी बना दिया, बल्कि दुनिया भर में इसे सुर्खियों में ला दिया। आलम यह रहा कि तत्कालीन शिक्षा मंत्री धर्मेन्द्र प्रधान को कुर्सी छोड़नी पड़ी और सुप्रीम कोर्ट ने पुलिसिया कार्रवाई के खिलाफ दायर याचिकाओं को सुनवाई के लिए स्वीकार कर लिया। अब दिल्ली पुलिस ने अदालत में हलफनामा देकर अपनी सफाई पेश की है कि सीजेपी को संसद-मार्च की अनुमति नहीं दी गई थी और उस दिन जंतर मंतर पर 30 हजार प्रदर्शनकारी एकत्र थे, जिन्हें काबू में रखने के लिए दिल्ली पुलिस ने हल्का बल-प्रयोग किया था। हलफनामे में दावा किया गया है कि प्रदर्शनकारियों ने पुलिस पर पत्थर फेंके, बैरिकेड्स तोड़े और सुरक्षाकर्मियों से सामान छीनने की कोशिश की। इन सबसे निपटने के लिए ही लाठीचार्ज का सहारा लिया गया और इस झड़प में 240 पुलिसकर्मी व 200 के करीब प्रदर्शनकारी जखमी हुए। दिल्ली पुलिस ने सादे कपड़ों में सुरक्षा बलों के जवानों की तैनाती का भी दावा किया है। उसका यह भी दावा है कि प्रदर्शन में असामाजिक तत्व घुस आए थे, जिनमें से 2,873 लोगों की उसने शिनाख्त की है। पुलिस ने पैलेट गन के इस्तेमाल से इनकार किया है।

इस हलफनामे में किए गए दावों और मुख्यधारा के मीडिया व सोशल मीडिया में नुमाया तस्वीरों, वीडियो क्लिप के बीच काफी अंतर है और इस मामले में स्वतंत्र जांच ही सही न्याय कर सकती है। इस लिहाज से सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला कि पुलिस ज्यादाती के आरोपों की जांच के लिए एक उच्च स्तरीय समिति गठित की जाएगी, स्वागत-योग्य कदम है। अदालत ने इस जांच समिति का नेतृत्व सुप्रीम कोर्ट के किसी पूर्व न्यायाधीश को सौंपने और सीबीआई के एक पूर्व निदेशक व एक पूर्व डीजीपी को इसका सदस्य बनाने का फैसला किया है, तो उम्मीद की जानी चाहिए, आरोपों की पूरी गंभीरता से जांच होगी और उसके निष्कर्ष भविष्य में ऐसे आंदोलनों से निपटने के लिए पुलिस को नई राह दिखाएंगे। इस समिति से जल्द से जल्द अपनी जांच पूरी करने के लिए अनुरोध किया जाना चाहिए, ताकि देश हकीकत से वाकिफ हो सके। सीजेपी पर भी यह जिम्मेदारी आयद होती है कि वह घायल छात्रों से जुड़े तमाम दस्तावेज इस उच्चस्तरीय जांच समिति को मुहैया कराए।

दिल्ली पुलिस के इस दावे में दम हो सकता है कि भीड़ में असामाजिक तत्व घुस आए थे। असामाजिक तत्व ऐसे मौकों का फायदा उठाने की फिराक में रहते हैं, लेकिन जो पुलिस आज यह दावा कर रही है कि इनमें से 2,873 लोगों के खिलाफ संगीन आरोप हैं, तो क्या वह प्रकारांतर से अपनी ही नाकामी नहीं कुबूल कर रही कि वह

उन्हें सलाखों के पीछे नहीं रख पाई? जांच को अंजाम तक ले जाने में दिल्ली पुलिस का रिकॉर्ड बहुत अच्छा नहीं है। दिल्ली दंगों में उसके द्वारा दायर हत्या के अनेक मामलों में आरोपी सुबूतों के अभाव में बरी हो गए। वारदात के लगभग छह साल बाद आईबी अधिकारी अंकित शर्मा के हत्यारोपियों को पिछले महीने वह सजा दिला सकी। अभी भी हत्या और दंगा करने के दर्जनों मामलों की सुनवाई चल रही है। बहरहाल, सीजेपी का आंदोलन देश के नौनिहालों के भविष्य से जुड़ा था, इसलिए इस मामले में शीर्ष अदालत के आखिरी फैसले का इंतजार रहेगा। दिल्ली पुलिस को भी यह शायद अधिक संवेदनशील बना सके।
